वैशाख, १३७६ साल
अप्रैल, १९६९ ई०

मैथिली कविता

मैथिली
कविता
क
प्रगतिशील
त्रैमासिक

सम्पादक
नचिकेता

* कार्यालय *
१६२/८०, लेक गार्डेन्स,
कलकत्ता—४५

वार्षिक चन्दा-१ टाका
प्रति संख्या-३० पाइ

वर्ष— २
अंक— १

वैशाख, १३७६ साल
अप्रैल, १९६९ ई०

मैथिली कविता

मैथिली
कविता
क
प्रगतिशील
त्रैमासिक

सम्पादक
नचिकेता

* कार्यालय *
१६२/८०, लेक गार्डेन्स,
कलकत्ता—४५

वार्षिक चन्दा-१ टाका
प्रति संख्या-३० पाइ

वर्ष— २
अंक— १

अनुक्रम......

अभिलाष हमर

माटिक शंकर बहुतो पूजल,
पूजक अछि शिव - सदेह सत्वर।
प्रत्यक्ष ब्रह्म केर भवन बनय
ढोङ्गी समाज केर छाती पर॥

डिहवार रहथि नहि पीढ़ी तर, लय चलथि चेतना डगर-डगर
सलहेस माटि केर घोड़ा तेजि, जन-जागृति आनथि नगर-नगर

देशक नेता! हे युग चेता,
कतवा दिन धरि ठकबै जन कें?
ई व्यर्थ विवादक जाल,
अहाँ कतबा दिन धरि रहबै बुनने?

चेतू आबहु बहुतो खयलहुँ, माखन मिश्री मेवा अचार।
गुटबन्दि तेजि सत्कर्म करू, अछि उसरि रहल माया बजार॥

झुट्ठे अफवाह उड़ा कए जे जन भावनाक भंडार लूटल।
बनि स्वयं मदारी रथ हाँकल, देखू तकरे पहिया टूटल॥

निर्लज्ज जकाँ बनि कए थेत्थर जँ आबहु लोभ करब बेसी।
निश्चय समूल विध्वंस होयत, सठि जायत अहाँ के सब ठेसी॥

सब दिन अनन्यतम सत्य सनातन धर्म।
जेहि मे रहैत आयल युग सँ सत्कर्म॥

भारत संसारक गुरु, न कहिओ भ्रम मे जग कें राखल।
जागल पुरुषक नहि हो विनाश से सब दिन सँ जे भाषल॥

साक्षी अछि वेद जकर सब दिन, पथ भ्रष्ट न अछि जेहि मे विचार।
स्वार्थी कपटी केर कपट वेश, कयलक नवीन नकली प्रचार॥
नहि जातिवाद, ने धर्मवाद, हम चाही केवल कर्म वाद।
जँ बादक अधिक प्रयोजन! तँ चाही मानवता वाद मात्र।

जेहि मे भारत केर शुद्ध सनातन धर्म मात्र द्रष्टव्य होय।
पुनि कर्म एवं अधिकार, न फल केर चिन्ता,
अपकार पाप, उपकार पुण्य कहि रहल भागवत गीता॥

तेँ महा प्रलय केर अन्हर मे ई नकली घर उधियाए खसय।
मनु, जाज्ञवल्क्य, वेदव्यासक, पुनि सत्य केतु फहराय उठय।

छोड़य छलिया निज कपट भेष, नहि हो बकरी बाघम्बर तर।
अहिवातक पातिल मे प्रदीप नहि हो झांपल, हो प्रबल-प्रखर।

बहुतो दिन सँ जे रहल मूक,—
से जागय जन-मन प्रलयंकर।

कर्तव्य शील मानव, आदर्शक —
भवन बीचहो अजर - अमर।

निष्पक्ष भाव हो प्रकट आइ—
अछि सैह मात्र अभिलाष हमर॥

—प्रदीप 'मैथिली पुत्र'

सुरक्षाक दिशि—

चूमि चरण भूमि - भूमि बरण कए कृतान्त के
उमकि चलल तरुण कुमुक मुदित प्रान्त प्रान्त के ॥
दिग्गजक मस्तक पर दस्तक दए पश्त पश्त
ध्वस्त करबाक प्रण कए कए प्राणान्तिके ॥
शावक केर सिंह नाद सुनि सुनि त्यागल विवाद
निर्विषाद बेप्रमाद मचलल उद्भ्रान्तिके ॥
उत्तुङ्ग शिखर तुङ्गनाथ पर मृदंग बमकि रहल
गमकि रहल गन्धवह पुष्पक दल चमकि रहल
तमकि रहल सेनानी अभिमानी सनकि रहल
माओसेतुंग चाउ कम्पित चीनी दल झनकि रहल
खनकि रहल चूड़ी रणचण्डी आक्रांति के ॥
नगपति केर हिमकिरीट दर्प ककर कर विजीत
अमर सुधा सींचि सींचि मृत सप्राण हो प्रतीत
रणभेरी बाजि उठल गाबि उठल समर गीत
सिमटि चलल सीमा पर लद्दाखक बीत बीत
छत्रपति शिवाजी नाचलि दुर्दान्तिके ॥
पंचशील भेल ढील वृद्धक अछि कोंढ़ गील
अमरनाथ कैलाशक मानसर झील झील
लहरि लहरि डोलि डोलि एखनहु धरि कह सलील
भारत केर संस्कृति मे सानल मम तील तील
मील मील ताल ठोकि बोल देल क्रान्ति के ॥

—गोविन्द झा

रक्तक्षरण भ' रहल अछि

हमर माथ क भीतर रक्तक्षरण भ' रहल अछि।
स्पष्ट बूझि रहल छी—
आब बेसी दिन नहि।
कारण,
हमर प्रभात दिवस क अवसान मे।
जखन जागि उठैछ
चित्त क किछु आलोकित दिक;
मानवीय प्रवृत्ति।
आ'—
दुनू हाथ सँ हमर ठोंठ दाबि कए
कैफियत चाहैछ हमर भरि दिन क काज क।

बाद मे—
सूर्यालोक जखन
खिड़की सँ हुलकैछ,
ओ धड़फड़ा कए हमरा छोड़ि दैछ।
लज्जावती नारी जकाँ।

—नचिकेता

●●

अकाल

मनुज सूखि कंकाल भेल छै,
सबहक मन मे त्रास छै।
धह-धह जरै करेज धरा के,
पानिक नहि आभास छै।

हेरि-हेरि घर फिरै किसानो,
सब क्यो भेल उदास छै।
अल्हुए साल कतेको खेपत,
आशहि पर विश्वास छै।

ग्रीष्म गेल, बरसात ओरायल,
शरद क कोन बिसात छै?
मकइ, धान, रब्बी चौपट भेल,
जन-जन भेल हताश छै।

—श्री हरिश्चन्द्र झा

●●

चैत क पछवा

आइ पराते सँ अछि पछवा खूब केने अनघोल रे।
मदमातल बेमत्त जकाँ ई पीटि रहल जनु ढोल रे॥

देखि बसंतक कंतक संगम, कोकिल केर मधुगान,
आ' पुरवैया केर हिलोरा पर झूमल भगवान;
देखि सकल नहि ई आनन्दी, खोलय दौड़ल पोल रे॥

पूर्ण बली सन ऊगल दिनकर गुमसुम भेल विहान,
आगिक कण सन रश्मि नेने जनु करतै बिश्व मसान,
भेल उद्दण्ड, बढ़ल अधिकाधिक वीरत्वक दै' मोल रे ॥

नरपातक जे घर बैसल अछि देखि समर संग्राम,
माता हेतु न चूबय जकरा तन पर कनिञो घाम,
ई आयल सम्भव तकरे फोलय आँखिक झोल रे ॥

जतवा अछि आनन्द बसंतक ततवा दुःख अनुमान,
सुख-दुःख, दुःख-सुख चक्रें नर्त्तित सबहक हेतु समान,
ई परिचय, प्रतिपल ई दै' अछि, ज्ञानहि लै' कटु बोल रे ॥

वीर बनल उदात्त सतत, नहि मन कें राखी म्लान,
भ' ने सक्रय हमरा सँ बढ़ि कए क्यो दुश्मन बलवान,
पाठ सतत पढ़वैत जगाबय विश्व 'रमण' पट खोल रे ॥
मदमातल वेमत्त जकां ई पीटि रहल जनु ढोल रे ॥

—श्री फूलचन्द्र मिश्र 'रमण'

●●

एहि पार ओहि पार

बरखा बरिसल पथ भेल दुर्गम, नदीक उमड़ल धार
पहु बिछुरल ओहि कातहि रहि गेल, कोना के उतरब पार
हम एकसरि डर लागि रहल अछि, अवला छी हम विकल विवस छी
बहु बिन रहब एक छन दुस्सह, किछु न सुझै अछि बड़ असतस छी

कोनो जुगुति नहि सूझि पड़ै अछि, जे धारक ओहि बात लगाबै
हाथ पकड़ि कए बिना डुबौने किओ नहि अछि जे पार लगाबै
अरौ नभरिया, कोनो भाँति दे पार लगा, हम बड़ गुन गायब
लोबें नाव, पाल तानें निज, हम ओहि पार अबस झट जायब

—बुद्धिनाथ झा 'कैरव'

●●

आफिस

टप - टप - टप.........
पसीना चूबि रहल;
गंजी आ आँगी
क्रमशः भीजि रहल।
आइ अछि
गुमकी बड़ कैने;
आराम भेटत
संध्याकाल नहैने;
तावत,
फाइल उनटा रहल छी
आफिसक टाइम कें
कोनहुना खपा रहल छी।

आभास भेल
केबाड़ी सँ अबैत बयारक
चपरासी छल आयल

चिट्ठी नेने सारक
आर्डर चपरासी कें
चाहक लेल चुस्की
फाइलक बीच पत्र राखि पढ़लहुँ
त निकलल मुस्की।

—रामनारायण झा

●●

ग्रीष्म क संक्षिप्त चित्र

अंततः आइ
मार्त्तण्डक तामस सँ भेलीह विमुक्त
सहिष्णु वसुन्धरा;
छल देने जरा
हुनक हरियर वक्षस्थल;
आब रथ मोड़ल, गेल
छोड़ि
सेकय ईर्म
संध्याक छाहरि मे,
आ तखन
निशाक स्निग्धता मे।

दिनक यौवन काल]
छल जे हहाइत,

उड़बैत गर्द
आ सुखाएल पात,
डोलबैत जाइत
गाछक गात,
भयभीत कयने जन-जन कें
जुनि निकलू घर सँ,
करु अवरुद्ध हमर बाट,
सएह हड़बड़ाएल पथिक समीर
चलल आब सुस्ताइत;
क' जेना अनुमान
अछि ल'गे आब
निर्दिष्ट स्थान;
फूँकइत गाछ-पातक मध्य
प्रेमक पंचम,
कहइत संसार कें
आब बनब नहि कंटक
अहाँक मार्ग मे
भेल दुर्गम सुगम।

नहि निकलथि लाजें जे
दिव्यालोक मे
अगणित तारिकागण,
बहरैलीह सएह
तारेशक
अवलंबन लए,
नभ-उद्यान मे—

हिय बहलाबए
चंचल दृग कें
किछु टहलाबए—
देखय ओतय सँ
मर्त्यलोक मे—
छथि सूतल जतय
दिन चर्य्यानन्तर
क्लांत मनुष्य निष्कर्म भए
ओहि अदृश्य संसार मे,
बंद दृगांचलहुँ सँ देखैत ओकर दृश्य
जे जावत् दृश्य, सत्य
अदृश्य, असत्य।

—रमानाथ



पितामह क उक्ति

एखन जैंवाक योग नहि
कहि 'मृत्यु' कें
भीष्म रहला पड़ल शर-शय्या पर !

प्रमन भीष्म लगला सोचै—
भारतक भीषण, नवीन समस्या पर !

शर-शय्या पर पड़ल हम कहिया धरि
देखब भारत क ई दुरवस्था !

जैबाक योग की तैं नहि होइत अछि ?
पुनः एहि नव धर्मराज कें
परबोधै पड़त की हमरे ?
शक्तिविहीन, सामर्थ्यहीन
एहि जीवन मुर्दा क विश्रृंखलित पंक्ति
की एहिना रहत जाइत ?
जकर जन्म सँ मरण पर्यन्त
क्षुधार्त्त आँखि,
सटकल पेट
की एहिना हमर आँत कें
सदति रहत खोखरैत ?
कोटि-कोटि सूखल काँट सन सगर-भार्या
मातृत्वक यंत्र जकाँ
प्रतिक्षण उत्पादित क' रहल छथि
असंख्य नव-मूर्ति—
मानवता कें खोधि कए,
पाताल धरि ल' जैबाक हेतु !

आइ फेर की हमरा बुझाबै पड़त
धर्मराज कें—
जे
ब्रह्माक, अभिलेख पढ़ैत छथि
असहाय, अज्ञानी, कामी, आ' पामर !
विधाता सँ लिखा कए क्यो नहि आयल छथि
बनबाक हेतु धृतराष्ट्र !

स्वेच्छा वा सज्ञानतावश
ओ स्वयं करैत छथि वरण अन्धता कें
जौं किछु विवेक और धैर्य सँ
विज्ञान-देवता क करथि आराधना
त—
सब क्यो सहजहि भ' सकैत छथि संतुष्ट,
तखनहि भारत मे गान्धारी क हैत लोप;
नहि आयत असंख्य विशृंखलित—
सैन्य-दल !
छल-प्रपञ्च सँ नहि हैत
भाय-भाय मे महाभारत !
महुआ सन हैती जननी—
रत्न प्रसूता !

पुनः सीता, गार्गी, भारती, लीलावती, लखिमा
जनक, याज्ञवल्क्य, गोतम, कालिदास,
विद्यापति, मंडन, वाचस्पति आदि
श्रृङ्गार करताह एहि पावन भूमि भारत क !
बनत ई धरती पुनः
स्वर्ग अनुपम !!

—प्रो० इलारानी सिंह

हमर अतीत एवं वर्तमान

छल जतय सुधामय सरिता - जल,
जे पुण्य - भूमि अतिशय निर्मल,
छल सभक हृदय मधुमय निश्छल ।
हम ओहि मिथिला के वासी छी ॥

छल मानवता के मीत जतय,
छल जगदुर्लभ सम्प्रीति जतय,
छल भक्तिपूर्ण संगीत जतय ।
हम ओहि मिथिला के वासी छी ॥

छल अध्यात्मक सन्मान जतय,
छल विज्ञानक गुणगान जतय,
छल ज्ञानक पीठस्थान जतय ।
हम ओहि मिथिला के वासी छी ॥

छल जतय जगत् के प्रत्याशा,
जग - ज्योति जगाओल जे भाषा,
हम ओहि भाषा के भाषी छी ।
हम ओहि मिथिला के वासी छी ॥

छलि होम यज्ञ सँ धन्य मही,
छलि शस्य पूर्ण श्यामल धरती,
छल घर - घर मे घृत दूध - दही ।
हम ओहि मिथिला के वासी छी ॥

गौतम, कणाद् ओ वाचस्पति,
कवि कालिदास ओ विद्यापति,
छला जनक सन जतय नृपति ।
हम ओहि मिथिला के वासी छी ॥

मण्डन चाणक्य सन जकर पूत,
मुनि याज्ञवल्क्य सन जग - विभूति,
जतय शिव सिंह सन क्रान्ति दूत ।
हम ओहि मिथिला के वासी छी ॥

जतय जनमलि सीता जगमाता,
भारती लखिमा सन जगख्याता,
जतय राम कहौलन्हि जगत्राता ।
हम ओहि मिथिला के वासी छी ॥

छल जकर अतीत गरिमा महान,
पशु - पक्षी कें छल वेद - ज्ञान,
अछि ओकर कलुषित वर्तमान ।
हम जेहि मिथिला के वासी छी ॥

—लक्ष्मीनारायण मिश्र

आसमर्द कए झर-झर बरसै

आसमर्द कए झर-झर बरसै मातल कारी मेघ सजल छै,
तापल धरती मन-मन हरषै, आसमान मे होड़ मचल छै ।

जग मलीन हँसमुख भ' जागल;
आलस विलीन बिलखि कए भागल,
पागल भेल बसातो दौड़ल
नाचै धरती सावन झहरल
नव तरंग लए कण-कण हरषै, दशो दिशा मे धूम मचल छै,
आसमर्द कए झर-झर बरसै, मातल कारी मेघ सजल छै।

सत्ता खुत्ती डबरा उमड़ल
सूखल कंठ नदी सब उछलल
पोखरि-झोखरि भरि-भरि उफकल
एक-एक भए मिलि कए मचलल
नव उमंग जन-जन मे जागल कामदेव के जाल खसल छै,
आसमर्द कए झर-झर बरसै, मातल कारी मेघ सजल छै।

हरबहवा सब कूदल उछलल,
गिरहथ जागू काया बदलल,
खेत-खेत मे पानिक हलचल,
देखू जग के काया पलटल
रोम-रोम गृहस्थक हुलसै पशु-पक्षी सब झूमि रहल छै,
आसमर्द कए झर-झर बरसै मातल कारी मेघ सजल छै।

गृहिणी घर मे आँच पजारथि
मोटगर अहगर रोट बनाबथि
हुलसि-हुलसि कए मोन जुड़ाबथि
रोटी जलखइ खेत पठावथि
कादो मे सब हिलिमिलि मचलै चून तमाकू ठोकि रहल छै,
आसमर्द कए झर-झर बरसै मातल कारी मेघ सजल छै।

मेघाडम्बर बोरा ओढ़ने
चरबहवा सब गीत गबै छै
आइ मेघ के नीचाँ मे सब
दादुर मेघ मलार गबै छै
अँगने अँगने नेना फुदकै ओरियानी मे नहा रहल छै,
आसमर्द कए झर-झर बरसै मातल कारी मेघ सजल छै।

कामिनी मस्त विभोर भेल अछि
तन भूषण सँ साजि लेल अछि
आइ रूप के खिलैक बेर अछि
मन मे भरल हुलास ढेर अछि
अधर पियासल रहि रहि मुसकै नभ आंगन कें चूमि रहल छै,
आसमर्द कए झर-झर बरसै मातल कारी मेघ सजल छै।

गरजल कड़कल बिजुरी चमकल
बिरहिन आइ विरह मे मचलल
रस - फुहार मे झूला लटकल
प्रेम - सुधा - रस पी - पी उछलल
मस्त 'नवीन' सरीवर मुसकै, आइ मेघ मे ढोल बजल छै।
आसमर्द कए झर-झर बरसै मातल कारी मेघ सजल छै।

—द्वारिका नाथ चौधरी 'नवीन'

●●

डोलिया ने डोलै एको ओर

नहु नहु डोलिया ल' जइहे कहरिया रे
डोलिया ने डोलै एको ओर
ओहि डोलिया मे जाय मन के किरनियाँ
कि बिलखि कए रोवय चकोर
संगे - संग खेललहुँ अटकन - मटकन
चोरिया रे नुकवा
कि संगे-संग देखलहुँ साँझ किरनियों
कि भोर भुरुकवा
संगे-संग खयलौं खेसरिया के झक्का
आरो खटका करौना रे
संगे-संग बिछलहुँ पाकल इमलिया
कि आम के बगौरना रे
बकरी पड़रुआ क गरवा क घंटिया क
संगे संग बटलहुँ डोर
कहरिया रे डोलिया ने डोलै एको ओर
विकल लड़िकपन अयलै हाथ जब
डनियाँ जवनियाँ रे
तड़पै चकोर चन्दा बनि गेलै
लव घर के दुलिहनिया रे
भूलि गेली कमला कछार क कादो
आओर पाँक सनौअल रे

भूलि गेली छने छन हँसलौं कि छने-छने
रुसलहुँ मनौवल रे
भूलि गेली कोना हम पोछलहुँ हाय
एक दोसर क आँखि क ळोर
कहरिया रे डोलिया ने डोलै एको ओर

—योगेन्द्र मोहन मिश्र

●●

पतन रोग मुक्त बनत

सत्यक अछि मार्ग सोभ लेकिन अति दुर्गम अछि
आवश्यक सत्य लेल साहस धृति दुर्दम अछि
डेग डेग पर डिगैक अवसर नहि आवय कम
अग्नि परीक्षौक समय आवय जे निर्मम अछि

सद्विवेक जागरूक सत्य पथ क सम्बल थिक
अचलाचल व्रती रहब वृत्ति दंड दृढ़बल थिक
आवश्यक भेला पर धन जन तन प्राणो जे
कऽ सकय निछावर से सत्य सरक उत्पल थिक

कहियो रहथि सत्य व्रती हरिश्चन्द्र दशरथ सन
राज पाट प्राण त्यागि रखल निज सत्य क प्रण
सुयश क तन पाबि सत्य बलें अमर भेलथि ओ
हुनका नहि मारि सकल पंच तत्व छीनि मरण

सत्य श्रेष्ठ सृष्टि शक्ति सत्य शक्ति अछि अजेय
प्राणो दय देब सत्य लेल रहत जकर ध्येय
मरियो कए अमर रहत भवक भव्य भूषण भए
सच्चरित्र तकर रहत कालजयी दिव्य गेय

सत्यक परीक्षा केर पावक पर चढ़ि चढ़ि कए
जीवन जल विमल बनय तपि तपि कए जरि जरि कए
सोना थिक सत्यव्रती पावक परीक्षा पाबि
बेरि बेरि चामीकर चमकि उठय बढ़ि बढ़ि कए

सत्य तरणि तेज सकत सहि न तमोगुण क तिमिर
रहत की अन्हार ततय, जतय उगल रहत मिहिर
जनगण मन बनय सत्य सूर्यक सदुपासक जँ
पतन रोग मुक्त बनत त समाज देह अचिर

—जयनारायण झा 'विनीत'

●●

साँझ आयल भोर भेल

साँझ आयल भोर भेल
कहै छथि सब लोक-वेद
बीतल जैह सैह नीक।
आ' हमहूँ कहै छी—
बीतत कालक सीढ़ी जँ बनाबू अहाँ

देखू दिन कतय गेल
अहूँ कतेक ऊपर छी !
छन छन, घड़ी घड़ी
पहर पहर, रोज-रोज
बढ़ल चलू आगाँ
अर्थक दिशा मे सुपथ पर चढ़ल चलू
स्वार्थ हेतु देशक समाजक वा,
घातक जुनि सिद्ध होउ
नश्वर देह-प्राण-हेतु
अनश्वर किछु कार्य करू
बीतल दिन बीतल गेल
अहाँ मनुज भास्वर छी।
यथार्थ क उन्मेष करू
परमार्थ क चिन्ता राखि
सबहक संग प्रीति, रीति, नीति क निर्वाह करू
'चरैवेति चरैवेति' आर्ष वचन मिथ्या नहि
चलल चलू, बढ़ल चलू
आबहु की अबेर भेल
साँझ आयल भोर भेल;
बीतल दिन बीतल गेल
अहाँ कतेक ऊपर छी !

—श्री राजदिव्य

●●

[ब्रेख्त छथि नव जर्मन कविता क ऋत्विक, नव कवि सभक पुरोधा। वर्त्तमान वैषम्य मूलक समाज-व्यवस्था क विरुद्ध विद्रोह घोषणा कैलन्हि ओ। तकरहि छन्दित प्रतिफलन थीक 'एक श्रमिक इतिहास पढ़ैछ'।]

एक श्रमिक इतिहास पढ़ैछ

के बनौने छल थीब्स क सातटा दरवाजा ?
पोथी मे त राजा सभ क नाम भरल पड़ल अछि।
ई पत्थर क बड़-बड़ टेढ़-घोंच चट्टान की राजा सब ढोअलथिन्ह ?
आ' बेबिलॉन ? एत्तेक बेर नष्ट कैल गेल
हर बेर के बनौलक ओहि शहर कें ? लिपा कए घर मे, कतय,
ओहि सोन-सन चमकैत शहर क मध्य बसैछ ओकर निर्माता ?
साँझ कें जखन चीन क देबार बनौनाइ पूर्ण भेल,
कतय गेलाह तखन राज-मिस्त्री लोकनि ? साम्राज्यवादी रोम मे
विजय क कमान भरल छल; के सब छल ओकर पाछाँ ?
ककर सहायता सँ
विजयी भेलाह सीजर ? बायजन्टियल गायन मे जीतलन्हि,
की ओतय सब मकान महल छल ? और लोककथा क अतलांटिसहु मे
जाहि राति समुद्र दौड़ल आयल
डूबैत लोग सब तैयहु चिकरैत छलाह दास सभ क लेल बरद जकाँ।
तरुण सिकन्दर भारत जीतलन्हि
की एसगरे ?
सीजर गॉल सब कें हरौलन्हि।

—नचिकेता

की हुनक फौज मे एक रसोइयो धरि नहि छलन्हि ?
स्पेन क फिलिप अपन जहाजी बेड़ा क
निमग्न विनष्ट भेला उत्तर कानलन्हि। की आन ककरहु आँसू नहि छल ओहि मे ?
फ्रेडरिक-महान सात वर्ष क युद्ध जीतलन्हि। हुनकर संग
और के सब जीतल छलथिन्ह ?
प्रत्येक पन्ना पर एक विजय।
ककर खर्च सँ ई विजय-नृत्य-समारोह ?
प्रत्येक दस बरस बाद एकटा बड़ लोग,
के देने छल बाजावला क दाम ?
एत्तेक तफसील।
एत्तेक प्रश्न !

—ब्रेख्त

●●

[अमेरिका मे जे नव अनुचिन्तन, अनुशीलन क बिहाड़ि आयलअछि, तकरहि फलश्रुति अछि ई कविता। मूरिलो माण्टीरो मेंडेस छथि प्रसिद्ध ब्रेजिलीय कवि।]

यू० एस० एस० आर०

यू एस एस आर
यू एस एस आर......यू एस एस आर
कुमारी कन्या आ' मूर्ख
अहाँ अपन दीयाक लेल तेल कियैक नहि कीनलहुँ ?

अहाँ सामयिक आ' नश्वर वस्तुएक विषय मे
कियैक सोचैत रहलहुँ ?
यू एस एस आर......यू एस एस आर
एक दिन अहाँक दुलहा ऐताह,
किन्तु तखन देर भ' जायत आ' ओ कानताह।
अहाँ अपन ट्रैक्टरे क हिसाब जोड़ैत रहलहुँ
अपन सामूहिक खेत क उत्पादन बढ़बैत रहलहुँ
किन्तु नहि देखलियैक दुलहा कें अबैत;
ओ लाल घर मे अहाँक बहिन सब कें ल' कए ढुकि गेलाह
यू एस एस आर
यू एस एस आर......यू एस एस आर
अपन घर आ' संस्कृति क उद्यान कें बोहारू
आकाश मे रॉकेट भेजू, आलोक-दीप जराउ,
प्रतिवेशी सब कें निमंत्रण दियौक, कियैक त रूबल बहुत भ' गेल अछि;
. चिरन्तन शब्द अहाँक अज्ञातहिं मे अहाँक पोषण करैत रहल।
यू एस एस आर
यू एस एस आर
जे अहाँ क पास पहिनहि सँ अछि,
तकरहि पैबाक लेल अहाँ अपन सब किछु पसारि देने छी।
अपन पिता क घर घुरि आउ जे बहुते बिशाल छथि।
ईश्वर क पुत्र सभ क संगति मे
ओ उदार, ओ महान,
अहाँ वापस भ' जाउ।
ओ भूलल-भटकल बहिन,
एतय अहाँक वाद्य आ' घंटी केर ध्वनि
जहाज क साइरेन क सीटी

आ' फेक्टरी क भोंपू सभ क
समवेत स्वर सुनाइ पड़त।

—मूरिलो माण्टीरो मेण्डेस

●●

[रायनर मारिया रिल्के छथि ख्यातनामा जर्मन कवि। हिनक अपरूप कवि-कर्म 'शिशिर' उपस्थित अछि मैथिली जगत क सम्मुख। हिनक कवि-कृति क प्रति आखर हिनकर प्रतिभा क जीवन्त स्वाक्षर अछि।]

शिशिर

पात सब गिर रहल अछि—
गिर रहल अछि दूर सँ
लगैछ जेना आकाश मे दूर क उपवन
झरि रहल अछि।
ओ सब झरि रहल अछि, ताहि मे
इंगित अछि नकार क,
आ' राति मे भारी धरती
डूबल जाइछ
हजारो तरेगण सँ निस्संगता मे।
हम सब गिर रहल छी।
ई हाथ गिर रहल अछि ओतय।
आ' आन सब कें देखू : ओ पतन हुनका सब मे अछि।
आ' तैयहु क्यो एक छथिन्ह, जे
एहि पतन कें थाम्हि रहल छथि
अपन हाथ मे असीम सुकोमलता सँ।

—रायनर मारिया रिल्के

●●

[बंगला क युवालेखन मे सँ अन्यतम प्रतिभावान कवि छथि श्री कल्याण कुमार दासगुप्त। कविता-विधा मे हिनकर अवदान अछि असामान्य, अविस्मरणीय। "मिथिला दर्शन" आदि मे पहिनहु हिनकर कविता मैथिली काव्य-लोक क प्रकाश मे आयल अछि। एतय प्रस्तुत अछि हिनक सार्थकतम रचना "ट्रेन सँ जाइत जाइत"।]

ट्रेन सँ जाइत जाइत

ट्रेन सँ जाइत जाइत
देखैत छी दुपहर कें औंघाइत बाजराक खेत मे,
कुम्ही क गर्वे हरियर पोखरि मे
उतरल आनम्र मेघ क छाया,
नील जलक मुकुर मे पनिडुब्बी निहारैछ मुँह,
भग्न शिवालय क आंगन मे निर्लिप्त गामक योगी,
कतहु प्रकृति जारैछ कठिन होमाग्नि—
रुक्ष, अजस्र बीहर,
पुनः कतहु कैकटा छोट वन्य टिल्हा और पहाड़ क पंक्ति
आ' नदीक उपर नाह क संसार,
आरो अनेक छिन्न छवि, सब ट्रेन सँ जाइत जाइत
कहियो देखने छी स्वयम्।

ट्रेन सँ जाइत जाइत
देखने छी आरो, चर-चाँचर मे
देखने छी माटि क मनुक्ख कें सोना उपजाबैत;
गोधूलि मे चिट्टी क जुलूस जकाँ हटिया सँ घर फिरैत लोग,
दिन क सौदा लए,

पोखरि क घाट पर गागर भरबा मे
ककरहु अलस समय बितैत;
देखने छी कतहु संथाल-कन्या कें ढेकी कुटैत,
प्रति पद-हिल्लोल सृजन करैछ छन्द-झंकार,
छन्द क झंकारें मूर्त्त कम्प्र ई सृष्टि
हजार-हजार प्राणी जागैछ प्रत्यह भिलाइ-दुर्गापुर मे।

ट्रेन मे जाइत जाइत सोचैत छी
शत-शताब्दी क सब स्टेशन क समय क माँग
पार कए चलल अछि एक अतन्द्र अद्भुत ट्रेन,
जकर आदि आ' अंत क दू-टा स्टेशन अज्ञात,
अनिबार स्पर्श करैत जा रहल अछि ई सब देश,
सरस्वती-ब्रह्मपुत्र-कावेरी-सिंधु क सब सेतु पर हैछ,
जाइत-जाइत सुर उठाबैछ ई अद्भुत ट्रेन भारतीप्रजा क चेतना मे,
इतिहास विलुप्त हैछ,
मृत्युञ्जय भारतीप्रजा मे सत्य भए जागि उठैछ
नीलाम्बु-चुम्बित जम्बूद्वीप,
सुन्दरवन क सन्ध्या जाइयो तैंलेसि दैछ दंडकारण्य क सान्ध्य-दीप।

— श्री कल्याण कुमार दाशगुप्त

निकष :—

● कवयो वदन्ति। श्री नचिकेता। मिथिला दर्शन प्राइवेट लिमिटेड, ब्रजनाथ मित्र लेन, कलकत्ता—६। पृष्ठ संख्या ८०, आकार डिमाई १×८; मूल्य—दू टाका।

जखन-जखन साहित्यिक विघटन होइत अछि तखन-तखन कोनो एहन युग पुरुषक आविर्भाव होइत अछि जे अपन सशक्त साहित्यिक विधाक द्वारा ओहि विघटन सँ युग कें सुरक्षित क' लैत अछि। एहि प्रकारक कैक दृष्टान्त संसारक समस्त साहित्यिक जगत मे उपलब्ध होइत अछि। हमरा दृष्टियें श्री नचिकेता समाजक कुत्सा, कुण्ठा एवं नपुंसकता आदिक विरुद्ध क्रांतिकारी स्वरक माध्यमे युगान्तकारी परिवर्त्तनक आकांक्षी छथि। मैथिली-काव्य-क्षेत्र मे सर्वाधिक देदीप्यमान नक्षत्र श्री नचिकेताक प्रस्तुत काव्य संग्रह 'कवयो वदन्ति' नव चेतनावादक प्रतिनिधित्व करैत अछि।

आइ मैथिली काव्य-जगत मे नवचेतनावादक स्वर सर्वाधिक मुखर भ' गेल अछि, कियैक त एहि मे भावी समाजक मंगलाशा सब सँ नीक जकाँ प्रतिभासित भ' रहल अछि। भारतीय संस्कृतिक अविच्छिन्न साहित्यिक परम्परा कें नव शैली मे कहि श्री नचिकेता कम प्रशंसा क कार्य नहि कैलनि अछि। यद्यपि श्री नचिकेता अपन काव्य-संग्रह मे नवीन छन्द कें ग्रहण कैलनि अछि तथापि हिनक भाषा मे सहज प्रवाह छन्हि जे अपन स्वाभाविकताक संग हृदयग्राही भ' जाइछ।

'कवयो वदन्ति' मे सैंतालीस गोट कविता संकलित अछि जाहि मे कवि सामाजिक यथार्थ तथा अधुनातम यान्त्रिक युगक मानव क मनोवृत्तिक सूक्ष्मतम विश्लेषण कैलनि अछि। हुनक कविताक अध्ययनोपरान्त समाजक यथार्थ स्थितिक चित्र आँखिक सोझा नाचै लगैत अछि। श्री नचिकेताक

काव्यक सर्वोत्कृष्ट उपलब्धि ई अछि जे जतय ओ अत्याधुनिक मानवक प्रति अनास्था भाव व्यक्त करैत ई घोषित करैत छथि जे 'हमरा सभक अग्रगति नहि हैत' ततहि ओ कंकाल सब कें अपन सशक्त तूलिका सँ सजा अमरत्व प्रदान करैत छथि। एहि सँ ई स्पष्ट भ' जाइछ जे श्री नचिकेता क व्युत्पन्न प्रतिभा मात्र समाजक विभीषिका पर दृष्टिपाते क' कए नहि रहि जाइछ, अपितु समाजक ओहि प्रचण्ड कुरूपता कें दूर करबाक प्रयास सेहो करैत अछि। अधुनातम युगमे नव कविता क नाम पर कविता क जे रूप मैथिली काव्य जगत मे दृष्टिगोचर भ' रहल अछि ओ अर्थ-हीनता, दुरूहता, अबोध-गम्यता आदिक कुहेलिका-निर्मित परिधान सँ युक्त अछि, किन्तु तद्विपरीत प्रस्तुत काव्य संकलन क पंक्ति - पंक्ति अर्थ - गौरव क विशिष्टता सँ समन्वित अछि।

● विद्यापति सौरभ। जयकान्त झा 'श्रुतधर'। मैथिली प्रकाशन समिति, कलकत्ता। डबल क्राउन १×१६। मूल्य—७५ पैसा। पृष्ठ संख्या—३२

महान क पदयुगल मे अर्पित ई श्रद्धांजलि सत्ये सुन्दर लागल। कवि संस्कृति एवं मैथिलीक पैव विद्वान छथि। ओ स्वीकार कैने छथि, कवि-कर्म कें पाठक क समक्ष उपस्थित करबा से समय क स्वल्पता छल। तँ, शिल्प-कृति क परिच्छन्नता परिपूर्ण रूप नहि पाओल अछि। तैयहु, लेखनी पर कवि कें अधिकार छन्हि ओर छन्हि अमन क्षमता पर आत्मविश्वास। तँ गुण-राजि क अलंकरण सँ त्रुटि-विच्युति झँपा गेल छन्हि। ई काव्य आदि, उत्तर आ' उपसंहार—तीन खंड मे विभक्त अछि। यदि श्रद्धाप्रमुदित हृदय सँ पाठक एकरा पढ़ताह, त' निराश नहि हैताह। छपाइ, बन्हाइ आ' आवरण-चित्रादि चित्ताकर्षक अछि।

—प्रोफसर डा० प्रेमशंकर सिंह

अध्यक्ष, मैथिली विभाग, भागलपुर बिश्वविद्यालय।

दृष्टिपात·········

युगानुरूप अलंकार सँ रूपायित भए 'मैथिली कविता' उपस्थित अछि अपनेक सम्मुख। अजस्र शुभेच्छा-शुभकामना आ' सहयोगिता क पाथेय कें अंगीकार कए हमर जागरण क चिन्ता आ' सुषुप्तिक स्वप्न एहि बेर पूर्ण कैलक अपन जीवन क प्रथम वर्ष। हर्ष क बात त ई जे हमर स्वप्न क वास्तविक प्रतिफलन सब दृष्टियें सार्थक भेल अछि। जतय सामयिक पत्रिका क संख्या नितान्त नगण्य हो, काल क भृकुटि-वृत्त मे जतय स्नेहमयी जननी मृतवत्सा होथि, ततय केवल कविता-पत्रिका क समयानुग उच्च स्तर क प्रकाशन-परिकल्पना क सफलता निश्चयमेव विस्मय क विषय मानल जा सकैछ आ, ताहि लेल धन्यवादार्ह छथि हमर समस्त सहयोगी—पाठक, कवि, पुस्तक-विक्रेता आदि। आनन्दक विषय ई जे पत्रिका क प्रकाशन मे सप्ताह वा दिनक त कथे कोन, कहियो घंटो भरिक विलम्ब नहि भेल अछि।

'मैथिली कविता' क बहु विघोषित उद्देश्य अछि नपुंसकता, निराशा, सड़ल आक्रोश, संस्कार-हीनता (अश्लीलता) एवं देश-द्रोह क उन्मूलन आ, प्राचीन तथा नवीन क स्वस्थ समन्वय क आधार पर स्थापित नव चेतना-वादी साहित्य क प्रतिष्ठा। फोकटिया यश-लिप्सा-निमग्न, नव रूढिवाद मे आबद्ध, विदेशी उच्छिष्टजीवी, संकीर्णमना स्वार्थान्वेषी साहित्यकार सब कें प्रश्रय देब 'मैथिली कविता' क उद्देश्य नहि। पाश्चात्य जगत क स्तूपीकृत आवर्जना क दुर्गन्धि क भारवाही पछिया क विरुद्ध ई पत्रिका दुर्भेद्य देवार बनि गेल अछि। हँ; ईहो सत्य जे सर्जनात्मक संजीवनी प्रतिभा सँ सन्दीपित पाश्चात्य उद्यान क प्रत्येक पुष्प-राजि क सुरभि क अभिनन्दन क लेल 'मैथिली कविता' क प्रत्येक वातायन कें उन्मुक्त राखल गेल अछि। (तें नियमित रूपें प्रख्यात यूरोपीय कविताक अनुवाद प्रकाशित भ' रहल अछि।)

समाजक प्रत्येक क्षेत्र मे परिव्याप्त उच्छृंखलता और अव्यवस्था कें कहियो आदर्श वा काम्य नहि मानल जा सकैछ। दिग्भ्रान्त सामान्य

जनता कें औरहु अधिक दिग्विहीन केनाइ अत्यन्त अवांछनीय तथा गर्हित काज हैत। तेँ साहित्यकार लोकनिक एक प्रबुद्ध एवं सचेत वर्ग आइ तत्पर भ' गेल अछि जे ओ ऋतक अवतारणाक लेल आप्राण प्रयास करत। प्रत्येक युग मे समाजक सब सँ पैघ दायित्व रहैत छैक साहित्यकार लोकनिक एही वर्ग पर जकरा कविक संज्ञा सँ अभिहित कैल जाइत छैक। तिमिराच्छन्न समाज कें सदति कविये लोकनि पथनिर्देश दैत आयल छथि। उशना, वाल्मीकि, वेदव्यास, कालिदास, चन्दवरदायी, विद्यापति और तुलसी आदिक गणना एही वर्ग मे कैल जाइत छन्हि।

कोनो व्यक्ति वा समूह कहियो उपर्युक्त कोनो कवि कें नेतृत्वक लेल अनुरोध नहि कैने छलन्हि। कवि लोकनि ककरहु द्वारा नियुक्ति वा आदेश पैबाोक अपेक्षा नहि करैत छथि। समाज वा देशक दुरवस्था देखि हुनक अन्तश्चेतना हुनका, बौद्धिक नेतृत्व करबाक लेल, बाध्य क' दैत छन्हि। आइ प्राचीन और नवीनक समन्वक आधार पर भारतीय समाज क नव निर्माण क लेल प्रतिबद्ध प्रतिभा-सम्पन्न कवि लोकनि आश्वस्त छथि जे मानव-जाति कें जीवा क छैक। तेँ अभ्युदय क अवतारणा हो न कि आत्म-घात क। एहने प्रबुद्ध एवं सचेत साहित्यिक नेता लोकनिक सेविका थिकन्हि हुनक ई अपन पत्रिका "मैथिली कविता"।

विदेशी उच्छिष्टजीवी कुसंस्कार क प्रचारक पत्र-पत्रिका सब देखैत-देखैत बरसाती बेंग जकाँ कनेक काल टरटरा कए बिला गेल। मैथिली-प्रेमी जनता संस्कारापन्न तथा प्रबुद्ध अछि। एकरा लग मिथ्याचारी लोकनिक भाभट कतेक दिन चलि सकैत छल? जेना प्रकाश क आगमन सँ अन्धकार क लोप भ' जाइत छैक तहिना "मैथिली कविता" क आविर्भाव सँ मैथिल संस्कृति पर आघात करबा मे संलग्न पत्रिकादिक लोप-प्राय भ' गेल अछि। मैथिली पाठक कें चिन्हबा मे विलम्ब नहि भेलन्हि जे के हंस थीक और के बगुला।



MAITHILI KAVITA : April '69.
[Registered with Govt. of India under R. N. 16549/67]

प्रो० इला रानी सिंह द्वारा सिंह प्रेस, १६२/८०, लेक गार्डेन्स, कलकत्ता-४५
सँ मुद्रित तथा प्रकाशित ।